स्वतंत्र कुमार, जे के सामने

अनूप सिंह और अन्य- याचिकाकर्ता

बनाम

चंदर कांत पृथ्वी और अन्य, उत्तरदाता

सी. आर. नं.54 1998 का

5मार्च, 1998

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-आदेश 1 नियम 10-विशिष्ट निष्पादन के लिए वाद-अंतरिती विक्रेता से भूमि खरीदता है-क्या वाद में पक्षकार के रूप में शामिल किया जा सकता है।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि जब पक्षकार पहले से ही न्यायालय में हैं और विवाद एक ही विषय वस्तु से संबंधित है और पक्षकार एक ही पक्षकार द्वारा से अपने हित और अधिकारों का दावा करते हैं, तो विवादों पर पूरी तरह से और अंत में निर्णय लेना और उनका निर्धारण करना उचित होगा।जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि विवाद के पूर्ण और अंतिम निर्धारण के लिए ऐसा पक्ष आवश्यक है, तो आवेदक को आम तौर पर कार्यवाही में पक्षकार के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।अकेले मुकदमेबाजी की बहुलता से बचना अपने आप में अभियोग के लिए आधार नहीं हो सकता है, लेकिन यह निश्चित रूप से एक प्रासंगिक कारक है जिसे इस तरह के आवेदन पर निर्णय लेते समय न्यायालय के दिमाग में रखना चाहिए क्योंकि मुकदमेबाजी की ऐसी अनावश्यक बहुलता की रोकथाम सिविल प्रक्रिया संहिता जैसी प्रक्रियात्मक कानून की नींव और भावना है।

(पैरा 6)

याचिकाकर्ता की ओर *से अधिवक्ता रमेश हूंडा*

कुलवीर नरवाल, अधिवक्ता, *नंबर 1 के लिए*

प्रतिवादी की ओर *से अधिवक्ता रंजीत सैनी।*

फैसला

स्वतंत्र कुमार, जे.

(1)यह पुनरीक्षण विद्वत विचारण न्यायालय के दिनांक 19.11.1997 के आदेश

के विरुद्ध निर्देशित किया गया है, जिसके द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 नियम 10 के अधीन याचिकाकर्ताओं के आवेदन को खारिज कर दिया गया था। उक्त आदेश का विरोध करते हुए याचिकाकर्ताओं की ओर से उठाया गया मूल तर्क यह है कि याचिकाकर्ता कार्यवाही के लिए आवश्यक पक्षकार हैं और याचिकाकर्ताओं की उपस्थिति न्यायालय को विवाद में मुद्दे को अंततः और प्रभावी ढंग से निर्धारित करने में मदद करेगी।

(2)इससे पहले कि न्यायालय इस विवाद के गुण-दोष पर चर्चा के साथ आगे बढ़ सके, अपेक्षित तथ्यों का उल्लेख करना उचित होगा।

(3)अभियोक्ता श्रीमती. चंदर कांता प्रुथी ने संत लाई कथा और दूसरे के खिलाफ 1.10.1997 पर स्थायी निषेधाज्ञा के परिणामी राहत के साथ विशिष्ट प्रदर्शन के लिए एक मुकदमा दायर किया था।इस मुकदमे में, प्रतिवादियों को निचली अदालत *द्वारा 8 अक्टूबर,* 1997 के आदेश के अनुसार, पूर्व मुकदमा के खिलाफ कार्रवाई करने का निर्देश दिया गया था।मुकदमे विचाराधीनता होने का पता चलने के बाद, याचिकाकर्ताओं ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 नियम 10 के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें आरोप लगाया गया कि उन्होंने प्रतिमुकदमाियों *से* मुकदमे की जमीन खरीदी थी-10 अक्टूबर, 1997 के पंजीकृत बिक्री-विलेख *के माध्यम* से।याचिकाकर्ता जो एक ही संपत्ति के प्रामाणिक खरीदार हैं, यदि वर्तमान मुकदमा में कोई प्रश्न निर्धारित किया जाता है तो वे प्रतिकूल रूप से प्रभावित होंगे।अभियोक्ता द्वारा आवेदन को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि उसने पिछले 16 वर्षों से मुकदमे की संपत्ति पर कब्जा कर लिया है और पूरी बिक्री का भुगतान पहले कर दिया गया है।यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ताओं के पक्ष में बिक्री-विलेख गलत उद्देश्य से और अभियोक्ता के हित को खतरे में डालने के लिए बनाया गया था।अभियोक्ता के अनुसार, वर्तमान मुकदमे में पारित यथास्थिति के आदेश को प्रतिमुकदमाियों को विधिवत सूचित किया **गया** था और बिक्री-विलेख एक नकली लेनदेन है।यह आगे तर्क दिया गया कि याचिकाकर्ताओं को अभियोक्ता की इच्छा के खिलाफ कार्यवाही में मुकदमाकार के रूप में शामिल नहीं किया जाना चाहिए जो मुकदमे का प्रमुख पात्र है।

(4) विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने इस आवेदन को मुख्य रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया कि अभियोक्ता ने याचिकाकर्ताओं के खिलाफ पहले ही *एक मुकदमा दायर* कर *दिया है जिसका शीर्षक* श्रीमती है। उस मुकदमे में चंदर कांता बनाम अनूप सिंह और अन्य और उनके बीच के अधिकारों का निर्धारण किया जाएगा।यह आगे देखा गया है कि वर्तमान वाद में याचिकाकर्ताओं के खिलाफ लागू किए गए लोगों को बेचने का समझौता नहीं मांगा जा

रहा है, इसलिए उन्हें मुकदमाकार के रूप में शामिल नहीं किया जाना चाहिए।इस आदेश से व्यथित, वर्तमान पुनरीक्षण याचिकाकर्ता द्वारा दायर किया गया है।

(5) यह कानून का तय सिद्धांत है कि बेचने का समझौता, अपने आप में, संपत्ति में कोई रुचि पैदा नहीं करता है। यह मुकदमा उन प्रतिवादियों के खिलाफ दायर बिक्री समझौते के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए है, जिन्होंने कथित रूप से पंजीकृत बिक्री के माध्यम से याचिकाकर्ता के पक्ष में संपत्ति में अपने हितों और स्वामित्व को हस्तांतरित किया था। एक तथ्य जो उपरोक्त अभिकथनों से स्पष्ट है, वह यह है कि दोनों मुकदमा इस मुकदमे में प्रतिवादियों को संपत्ति के मालिक के रूप में स्वीकार करते हैं और अधिकार, यदि कोई हैं, तो एक ही मुकदमा यानी प्रतिवादियों द्वारा से उनके पास आए हैं।दूसरे शब्दों में, एक के पक्ष में, प्रतिवादियों ने बेचने के लिए एक समझौते को निष्पादित किया था, जबकि दूसरे के पक्ष में, एक बिक्री-विलेख को निष्पादित किया गया था।मुक़दमे की विषय वस्तु आम है और याचिकाकर्ताओं और अभियोक्ता के बीच हितों का स्पष्ट टकराव है।यह निश्चित रूप से स्पष्ट है कि अभियोक्ता और याचिकाकर्ता दोनों एक ही विषय वस्तु के संबंध में विशेष रूप से वन-आधारित कथनों को ध्यान में रखते हुए सफल नहीं हो सकते हैं।अभियोक्ता का डोमिनस लिटस होने का निवेदन कानून का आत्यन्तिक सिद्धांत नहीं है।प्रत्येक मामले में न्यायालय द्वारा मामले पर विवेकपूर्ण तरीके से विचार किया जाना चाहिए।यदि न्यायालय का समाधान हो जाता है कि आवेदक कार्यवाही में आवश्यक या उचित मुकदमाकार होगा, तो वाद में मुकदमों के बीच विवाद के अंतिम निर्धारण और प्रभावी और पूर्ण निर्णय देने के लिए न्यायालय के समक्ष उसकी उपस्थिति की आवश्यकता होगी और इसके अलावा, वाद में दर्ज किसी भी निष्कर्ष से ऐसे मुकदमाकार के अधिकार प्रभावित होने की संभावना है, न्यायालय ऐसे आवेदक को कार्यवाही में मुकदमाकार के रूप में शामिल करने की अनुमति देने के लिए इच्छुक हो सकता है।यह सच है कि मुकदमेबाजी की बहुलता, अपने आप में, अभियोग के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, लेकिन यह निश्चित रूप से प्रासंगिक कारक है जिसे ध्यान में रखा जाना चाहिए जब न्यायालय इस तरह के आवेदन पर विचार कर रहा हो।इस स्तर *पर, कृष्ण लाई और* एक *अन्य बनाम सुदेश कुमारी* और अन्य , सी. आर. 1997 का सं. 1204,6 फरवरी, 1998 को तय किया गया था जिसमें यह निम्नानुसार आयोजित किया गया थाः—

> "सिविल प्रक्रिया संहिता में यह प्रावधान है कि मुकदमा कैसे दायर किया जाए और यह कैसे समाप्त होगा।संहिता निरंतरता का एक सूत्र प्रदान करती है, जो मुकदमा के विभिन्न चरणों को विनियमित करेगी।दूसरे शब्दों में, कानून के इरादे को संहिता के विभिन्न प्रावधानों से एकत्र

किया जाना चाहिए और सामूहिक रूप से और एक दूसरे के साथ संयोजन में पढ़ा जाना चाहिए।जबकि संहिता के आदेश 1 नियम 1 और 3 में यह प्रावधान है कि वे व्यक्ति कौन हैं जिन्हें वादी और/या प्रतिवादी के रूप में शामिल किया जा सकता है, नियम 10 न्यायालय को मुकदमों को सीधे जोड़ने और मुकदमाकारों को शामिल करने के लिए मुकदमाकारों को जोड़ने की शक्ति देता है और नियम 8-ए एक मुकदमाकार को एक मुकदमाकार के रूप में शामिल होने के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाने का अधिकार देता है, यदि आवेदक को किसी ऐसे प्रश्न में रुचि है जो मुकदमे में प्रत्यक्ष और पर्याप्त रूप से उत्पन्न होता है।आवश्यक और उचित अभियोग को विनियमित करने वाले प्रावधान मुकदमाकार, जिनकी उपस्थिति प्रारंभिक और अंतिम निर्णय के लिए न्यायालय के समक्ष आवश्यक है, उनका व्यापक परिप्रेक्ष्य में अर्थ लगाया जाना चाहिए, क्योंकि संहिता के आदेश 2 नियम 1 के प्रावधान स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि प्रत्येक वाद, जहां तक व्यवहार्य हो, तैयार किया जाए ताकि विवादों में विषयों पर अंतिम निर्णय के लिए आधार तैयार किया जा सके और उनसे संबंधित आगे की मुकदमेबाजी को रोका जा सके।यह मानना कि एक ही विषय वस्तु के संबंध में मुकदमे की बहुलता से बचना भी प्रासंगिक कारक नहीं है, जबकि मेरे विचार से, अभियोग के लिए आवेदन पर विचार करना एक ऐसा दृष्टिकोण होगा जो प्रक्रियात्मक कानून की भावना के अनुरूप नहीं है।

संहिता के प्रावधानों के लिए एक व्यापक और विचित्र दृष्टिकोण रखने के लिए, जो संहिता की योजना के अनुरूप भी होगा, आदेश 1 के प्रावधानों और संहिता के अन्य प्रभावी प्रावधानों को सामूहिक रूप से पढ़ना होगा, बजाय इसके कि संहिता के आदेश 1 नियम 10 को संक्षिप्त सार या पृथक रूप से पढ़ा और समझा जाए।प्रक्रियात्मक कानूनों या उनसे संबंधित प्रावधानों के निर्माण की व्याख्या को न्यायाधीश के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पढ़ा जाना चाहिए जो कानून के मूल शासन का एक अनिवार्य उद्देश्य है।जीवन के सभी क्षेत्रों में आधुनिक विकास के साथ न्यायालयों को प्रक्रियात्मक कानूनों को ढालना चाहिए ताकि सभी प्रश्नों के त्वरित निपटान और एक कार्यवाही

में निर्धारण के कारण को आगे बढ़ाया जा सके, यदि कानून में अनुमति है, न कि पक्षकारों को मुकदमेबाजी की बहुलता पैदा करने का निर्देश दिया जाए।

नवान्वेषी और मुख्य रूप से तय किए गए सिद्धांतों की पुनरावृत्ति के बिना और व्युत्पन्न तरीके से, कुछ कारकों को इंगित करना संभव है जिन पर न्यायालय द्वारा इस तरह के प्रश्न का निर्धारण करते समय विचार किया जा सकता हैः—

(a) क्या आवेदक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए एक आवश्यक और उचित पक्षकार है?

(b) क्या मामले का प्रभावी ढंग से और पूरी तरह से निर्णय लेने और हकदार पक्ष को एक पूर्ण और प्रभावी डिक्री देने के लिए न्यायालय के समक्ष ऐसे पक्ष की उपस्थिति आवश्यक है?

(c) क्या ऐसा इच्छुक पक्ष ऐसे व्यक्तियों के डिक्री में परिणत होने के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होगा या यह केवल दूर से, अप्रत्यक्ष रूप से और दूर से ही प्रभावित होगा?

उपरोक्त के अलावा, जहां न्यायालय उचित और पूर्ण निर्णय के लिए एक पक्ष की उपस्थिति को आवश्यक मानता है, तो यह अच्छी तरह से प्रासंगिक माना जा सकता है कि क्या ऐसे पक्ष के गैर-प्रवर्तन के परिणामस्वरूप मुकदमेबाजी की परिहार्य बहुलता होगी, तो पक्ष को नए मुकदमे में जाने के लिए मजबूर करने के बजाय एक पक्ष को शामिल करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

उपरोक्त सिद्धांत संपूर्ण नहीं हैं, बल्कि केवल संकेत हैं कि न्यायालय द्वारा इस तरह के विचार के अलावा क्या विचार किया जा सकता है, जिस पर न्यायालय द्वारा किसी दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उचित रूप से विचार किया जा सकता है।सिविल प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा संहिता के आदेश 1 में नियम 10-ए की शुरूआत से एक ऐसे मुकदमा को प्रभावी सुरक्षा प्रदान करने का विधायी इरादा स्पष्ट है जो किसी मुकदमे या कार्यवाही में न्यायालय द्वारा निर्धारित किए *जाने* वाले प्रश्नों से प्रभावित हो सकता है और पूर्ण निर्णय ले सकता है।

इस तरह के निर्णयों को आवेदक याचिकाकर्ता की पीठ पीछे करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। उनका कोई मतलब नहीं है।।इसके अलावा, एक ही पक्ष को एक ही संपत्ति के संबंध में एक ही दस्तावेज के आधार पर अलग-अलग मुकदमे और कार्यवाही दायर करने की आवश्यकता न तो न्यायाधीश के हित में होगी और न ही उचित होगी।बहुतायत और अनावश्यक खर्चों से बचना एक प्रासंगिक कारक है, जिस पर संबंधित न्यायालयों द्वारा विचार किए जाने की आवश्यकता है।यहाँ चंडीगढ़ आवास बोर्ड बनाम के. के. कलसी और अन्य, 1996 (2) में इस न्यायालय की *एक खण्ड पीठ* की *निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना* प्रासंगिक होगा।सभी तत्काल निर्णय 554

"पक्षकारों के बीच विवाद का निर्धारण करने का उद्देश्य मुख्य रूप से उनके विवादों को अंतिम रूप देना है न कि आंशिक विवाद का निर्धारण करना और पक्षकारों को निर्धारण के लिए अलग-अलग कानूनी रूपों में भेजना।"

(6) इसकेयहाँ प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील ने हजुरा बनाम सुखदेव सिंह (1996 P.L.JL 37) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, दूसरी ओर याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने अनिल कुमार बनाम गुरदियाल सिंह और अन्य ((1994-2) P.L.R 711) सुभ राम बनाम नित्य नंद और अन्य (990 P.L.J. 74) और राजिंदर सिंह बनाम जसवंत सिंह और अन्य के मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है।जैसा कि मैंने पहले ही चर्चा की है कि मुकदमेबाजी की बहुलता से बचना अपने आप में अभियोग का आधार नहीं हो सकता है।इस प्रकार, हजुरा सिंह (उपरोक्त) मामले में न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचार *पर* बहुत अधिक विवाद नहीं है, लेकिन यह निश्चित रूप से एक प्रासंगिक कारक है जिसे इस तरह के आवेदन पर निर्णय लेते समय न्यायालय के दिमाग में रखना चाहिए क्योंकि मुकदमेबाजी की ऐसी अनावश्यक बहुलता की रोकथाम सिविल प्रक्रिया संहिता जैसी प्रक्रियात्मक कानून की नींव और भावना है।याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय निश्चित रूप से मामले का समर्थन करते हैं और सुभ *राम और राजिंदर सिंह (सुप्रा) के* मामलों को देखते हुए वर्तमान मामले में सभी बल पर लागू होते हैं।भले ही याचिकाकर्ताओं की अनुपस्थिति में में एक डिक्री मुकदमे में अभियोक्ता के मुकदमा में पारित की जाती है, यह याचिकाकर्ताओं के अधिकारों के अधीन होगी जिसे अभी भी किसी अन्य मुकदमे में निर्धारित करना पड़ सकता है क्योंकि याचिकाकर्ताओं के खिलाफ निषेधाज्ञा का मुकदमा दायर किया गया है जिसमें

इन विवादों पर ठीक से निर्णय नहीं लिया जा सकता है।वह मुकदमा भी वर्तमान मुकदमा में अभियोक्ता द्वारा नियंत्रित किया जाता है, इस प्रकार, वह उक्त मुकदमा से उस तरीके से निपटने के लिए स्वतंत्र होगी जिसे वह उचित और उचित समझती है।वर्तमान याचिकाकर्ताओं को किसी अन्य मुकदमा में घसीटा जा सकता है।चर्चा का शुद्ध परिणाम यह है कि न्यायालय को वर्तमान मुकदमा में अभियोक्ता के अधिकारों पर बिक्री-विलेख के प्रभाव पर निर्णय लेना होगा।एक बार जब पक्षकार पहले से ही न्यायालय में होते हैं और विवाद एक ही विषय वस्तु से संबंधित होता है और पक्षकार एक ही पक्षकार द्वारा से अपने हित और अधिकारों का दावा करते हैं, तो विवादों को पूरी तरह से और अंत में निर्णय लेना और उनका निर्धारण करना उचित होगा।जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि विवाद के पूर्ण और अंतिम निर्धारण के लिए ऐसा पक्ष आवश्यक है, तो आवेदक को आम तौर पर कार्यवाही में पक्षकार के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।एक बार जब मुकदमाकार के पास एक बिक्री-विलेख होता है जो मालिकाना हक प्रदान करता है, तो वह वर्तमान प्रकार के मुकदमे के विषय में रुचि रखने के लिए बाध्य होता है।प्रतिवादियों ने *मुकदमा नहीं* लड़ने का विकल्प चुना है और उन्हें पूर्व एकपक्षीय खिलाफ कार्रवाई करने का आदेश दिया गया है।इस संबंध में आदेश 22 नियम 10 के प्रावधान याचिकाकर्ताओं की सहायता करेंगे।हो सकता है कि इसे समनुदेशन के रूप में नहीं कहा जा सकता है, लेकिन निश्चित रूप से यह ब्याज का हस्तांतरण है, चाहे मुकदमा दायर करने से पहले या बाद में और एक वास्तविक खरीदार को वर्तमान तरीके से नुकसान में नहीं रखा जा सकता है और उस भूमि के संबंध में उसकी पीठ पर निष्कर्ष दर्ज करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जिस पर वह पंजीकृत बिक्री-विलेख के आधार पर स्वामित्व का दावा करता है।यह समीचीन और न्यायाधीश के हित में होगा कि याचिकाकर्ताओं को मुकदमे में मुकदमाकार प्रतिवादी के रूप में शामिल किया जाए।नतीजतन, इस याचिका की अनुमति दी जाती है, 19 नवंबर, 1997 के विवादित आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है और याचिकाकर्ताओं का आवेदन आदेश 1 नियम 10 सी. पी. सी. के तहत किया जाता है स्वीकार किया जाता है।उन्हें मुकदमे में प्रतिमुकदमाी के रूप में शामिल करने का निर्देश दिया जाता है।मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अभियोक्ता और याचिकाआदेशता मुकदमाकार होने के नाते एक अन्य मुकदमा दायर *आदेशते हैं /जिसका* शीर्षक *श्रीमती है।* चंदर कांता बनाम अनूप सिंह आदि और दो अलग-अलग न्यायाधीशालयों द्वारा परस्पर विरोधी दृष्टिकोण अपनाने की संभावना से बचने के लिए, मैं न्यायाधीश के हित में यह मानता हूं कि दोनों मामलों की सुनवाई एक ही और एक

ही न्यायाधीशालय द्वारा की जाए।नतीजतन, यह निर्देश दिया जाता है कि दोनों मुकदमों की सुनवाई दीवानी न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग), रोहतक द्वारा कानून के अनुसार की जानी चाहिए।

अस्वीकरण :स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सूर्य करण चौधरी

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)

कहखोदा (सोनीपत) हरियाणा